



























### राय देवीप्रसाद 'पूर्ण'

जन्मतिथि मार्गशीर्ष कृष्ण १३ संवत् १९२१ वि०, जन्मस्थान अवलपुर। ये हिन्दी के उन नामी कवियों में थे जिनसे हिन्दी के लिए बहुत कुछ भाषा की जा सकती थी लेकिन वसमय में ही इनकी मृत्यु हो जाने से यह भाषा फलवती न हो सकी। ये फानपुर के प्रसिद्ध वकील और विद्वान थे। ये कविता ब्रजभाषा में ही करते थे। इनकी लिखी हुई पुस्तकों में चन्द्रफला-भानु-कुमार, धाराधर-धावन नामक नाटक और मेघदूत का हिन्दी पद्यानुवाद प्रसिद्ध है। ये ऊँची धेणी के कवि थे। इनकी कविताओं का एक संग्रह 'पूर्णसंग्रह' के नाम से अभी हाल ही में प्रकाशित हुआ है।

ब.वू. भगवानदास एम० ए०

जन्म १२ जनवरी सन् १८६९ ई०, निवास-स्थान "विधाम" चुनार, मिर्जापुर। बार दर्शन-शास्त्र के पूर्ण पण्डित, अङ्गरेजी और हिन्दी के ऊँचे लेखक हैं। भारतीय धर्मशास्त्र पर भी आपका बड़ा गम्भीर अध्ययन है। अङ्गरेजी तथा हिन्दी में आपने अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। आपने कुछ कविताएँ भी लिखी हैं जो समय समय पर 'धर्मशास्त्र' में प्रकाशित हुई हैं। हिन्दी से आपका बड़ा अनुराग है। हिन्दी-लेखकों में आप जैसे विद्वान् इतने-गिने हैं, और दर्शन-शास्त्र में तो आपकी धेणी के विद्वान् भारतवर्ष में दो-चार मिलेंगे। आप सम्मेलन के फलफत्ते वाले पचादश अधिवेशन में समापति हो चुके हैं। सम्मेलन के हिन्दी-विद्यापीठ की संस्थापना पड़ते-पड़ते आपके द्वारा ही हुई थी। फारो का विद्यापीठ आपके ही परिधम और उद्योग का फल है।

पं० नाथवत्साल मिश्र

निवास-स्थान कम्बुकर जिला रोहतक, जन्म संवत् १९२८ वि०। ये 'सुदर्शन' के सम्पादक, हिन्दी के अच्छे लेखक, कवि









चतुर्वेदो पं० रामनारायण मिश्र वं० ९०

जन्म फा० ६० ११ संवत् १९३१, जन्म-स्थान मिर्जापुर। मिश्रजी हिन्दी के पुराने लेखक और कवि हैं। आप प्रतापगढ़, गाज़ीपुर, बाँदा, इटावा, आगरा तथा जौनपुर में तहसीलदार के पद पर रहकर आजकल प्रयाग में रहते और सरकार से पेंशन पाते हैं। आपकी लिखी पुस्तकों में अग्यरोप ( काव्य ) शोकाधु, स्वागत-समागत, पंचरात्र का महाप्रपंच, धसंत-पञ्चरु, विनय, संगीत-सागर प्रकाशित तथा कामुक, प्रे की कविता, ओज की खोज अप्रकाशित हैं। भारतमित्र, भारत-व्रता, प्रयाग-समाचार, सुधानिधि, राघवेन्द्र, यादवेन्द्र, चतुर्वेदी, अन्युदय तथा मर्यादा में आपके सैकड़ों साहित्यिक लेख प्रकाशित हो चुके हैं। यदि उनका संग्रह अच्छे ढंग से किया जाय तो कई अच्छी पुस्तकें तैयार हो सकती हैं। चतुर्वेदीजी बड़े मृदुभाषी, विनोद-प्रिय, साहित्य-रसिक और सुकवि हैं। आजकल आप हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के संयुक्त प्रान्तीय प्रचार-संयोजक हैं।

पं० गिरिधर शर्मा “नवरत्न”

जन्म जेष्ठ शुक्ल अष्टमो सं० १९३८ वि०, निवास-स्थान भालरापाटन ( राजपूताना )। नवरत्नजी बड़े अच्छे कवि हैं। आप हिन्दीके सिवा संस्कृत और गुजराती में भी कविता लिखते हैं। इन भाषाओंके अतिरिक्त आपको उर्दू, मराठी, बंगला और प्राकृत का भी अच्छा ज्ञान है। आप के लिखे, अनुवादित तथा सम्पादित ग्रन्थों की संख्या २० के लगभग है। इन्दौर में मध्य-भारत हिन्दी-साहित्य-समिति, भालरापाटन में राजपूताना हिन्दी-साहित्य-सभा तथा भरतपुर में हिन्दी-साहित्य-समिति के संस्थापन तथा कार्य-संचालन में आप का मुख्य हाथ रहा है। अनेक विद्वत्समाजों से आप को “नवरत्न” “महोपदेशक” तथा “व्याख्यात-भास्कर” की उपाधियाँ मिली हैं। आप हिन्दी के अच्छे



































सहृदय तथा मिष्टभाषी हैं। ये गुरुकुल तथा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन आदि संस्थाओं में प्रतिष्ठा-पूर्ण पदों पर कार्य कर चुके हैं।

### पं० देवीदत्त शुक्ल

इनकी अवस्था अब ३५ वर्ष के लगभग होगी। ये साई'-खेड़ा, जिला उन्नाव के निवासी, माझकल 'सरस्वती' के सम्पादक हैं। ये 'किङ्कर' नामसे कविता लिखते हैं और हिन्दी के एक अच्छे लेखक हैं। बड़े सीधे-सादे, उत्साही, मिलनसार और हिन्दी के पूर्ण पण्डित हैं।

### बाबू गोविन्ददास

जन्म बिजयादशमी सं० १९५३ विक्रम, जन्मस्थान जयलपुर। बाबू साहब हिन्दी के प्रतिभाशाली कवि, लेखक और वक्ता हैं। आपको अङ्गरेज़ी, बँगला, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान है। १२ वर्ष की अवस्था से आपको हिन्दी से अनुराग है, और १५ वर्ष की ही अवस्था में आपने चम्पावती, सोमलता और कृष्णलता नामक उपन्यास लिखे थे। इसके अतिरिक्त आपने सुरेन्द्र-सुन्दरी, कृष्णकामिनी, होनहार और व्यर्थसन्देह उपन्यास, धाणालुर-परामय नामक महाकाव्य, विश्व-प्रेम एक मौलिक नाटक तथा तीर्थयात्रा-सम्बन्धी दो ग्रंथ और लिखे हैं। ये सब अप्रकाशित हैं। राष्ट्रीय-हिन्दी-मन्दिर के मुख्य संस्थापक आप ही हैं, क्योंकि उसठे सञ्चालन के लिये आपने १००००) दिये थे। शारदा-पुस्तकमाला आप ही की सहायता का सुफल है। आप स्वभावके बड़े सौम्य और उदार हैं। हिन्दी-साहित्य की स्थायी सेवा करने का आप में अदम्य उत्साह है। आप तृतीय मध्यप्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति हो चुके हैं। विद्या, धन, साहित्यानुराग

123  
 124

125  
 126  
 127

128  
 129  
 130  
 131  
 132  
 133  
 134  
 135  
 136  
 137  
 138  
 139  
 140  
 141  
 142  
 143  
 144  
 145  
 146  
 147  
 148  
 149  
 150  
 151  
 152  
 153  
 154  
 155  
 156  
 157  
 158  
 159  
 160  
 161  
 162  
 163  
 164  
 165  
 166  
 167  
 168  
 169  
 170  
 171  
 172  
 173  
 174  
 175  
 176  
 177  
 178  
 179  
 180  
 181  
 182  
 183  
 184  
 185  
 186  
 187  
 188  
 189  
 190  
 191  
 192  
 193  
 194  
 195  
 196  
 197  
 198  
 199  
 200

201  
 202

203  
 204  
 205  
 206  
 207  
 208  
 209  
 210  
 211  
 212  
 213  
 214  
 215  
 216  
 217  
 218  
 219  
 220  
 221  
 222  
 223  
 224  
 225  
 226  
 227  
 228  
 229  
 230  
 231  
 232  
 233  
 234  
 235  
 236  
 237  
 238  
 239  
 240  
 241  
 242  
 243  
 244  
 245  
 246  
 247  
 248  
 249  
 250  
 251  
 252  
 253  
 254  
 255  
 256  
 257  
 258  
 259  
 260  
 261  
 262  
 263  
 264  
 265  
 266  
 267  
 268  
 269  
 270  
 271  
 272  
 273  
 274  
 275  
 276  
 277  
 278  
 279  
 280  
 281  
 282  
 283  
 284  
 285  
 286  
 287  
 288  
 289  
 290  
 291  
 292  
 293  
 294  
 295  
 296  
 297  
 298  
 299  
 300

301  
 302

303  
 304

जगदीश प्रसन्न रूप से बहकता है। जाय बड़े सारल, स  
धैर्य, नावुक और एक अच्छे दोस्तदार बनि हैं।

पंडित बंजन शर्मा "उग्र"

उनका जन्म-स्थान जिला मिर्जापुर में, नागौरपो और उ  
बानक हो नदियों के दोनारे के बीच में सिन्धु-पर्यंत नागा  
टिपोंसे सटा "धुमार" नामक एक छोटा-सा ऐतिहासिक कस्  
है। ये एक प्रतिभाशाली लेखक, कवि, क्लामी-लेखक, नाटककार  
और सनादोबक है। गुरु लिखते हैं और अच्छा लिखते हैं  
इन्होंने "नशादना ईसा" नामक एक बहुत सुन्दर नाटक लिखा  
है। इसके अतिरिक्त इन्होंने "बन्द हंसों के स्तुत" नामक  
एक और पुस्तक लिखी है। एकान्त नाटक तो इन्होंने बनेक  
लिखे हैं। ये बड़े रिमोड-मिय, साहित्य-रसिक और नस्त्रवीर हैं।  
इसकी अवस्था इस समय २८ वर्ष के लगभग है।

पंडित बाबुरूप शर्मा "नवीन"

जन्म-संवत् लगभग १९१६ वि०, जन्म-स्थान उज्जैन। जाय  
बाबुरूप "नवीन" (कानपुर) के सनादक है। जाय बड़े नावुक  
कवि तथा क्लामी-लेखक है। कई वर्षों तक जाय "नवीन" के  
सनादक रह चुके हैं। साहित्य-रूपों पर लेख लिखने में जाय बड़े  
पटु हैं। जाय पायल और बला भी हैं। जायके हृदय में राष्ट्र-  
सेवा का बहुत प्रयत्न है। जायकी रचनाओं में राष्ट्रीय आन-  
रप के बड़े प्रयत्नों काय होते हैं।

जैनजी नुनदकुनरी चौहान

जन्म जायम गुरुकुल ५ सं० १९११ को बनाव में हुआ। यहां  
कास्मेट पब्लिक स्कूल में शिक्षा प्राप्त की। संवत् १९३१ में  
का मिनाड पंडना मिनाली दशरदसमन सिंह चौहान सं० २५,  
०-२६ सं० के साथ हुआ। कलकत्ता का पान्थ में नव







बाबू भगवतोवरण वर्मा बी० ए०

जन्म संवत् १९६० वि०, जन्म-भूमि शक्तोपुर ( उन्नाव ),  
निवासस्थान कुरुखवां, कानपुर। नात्रकल इलाहाबाद-यूनि-  
वर्सिटी में एम० ए० फ़ाइनल क्लास में इन्दी पढ़ रहे हैं। ये  
बहुत छोटी अवस्था से ही कविता लिखने लगे थे। इसी कविता  
में नावव-सृष्टिका अन्तर्द्वन्द और बहिर्द्वन्द दोनों रहता है। ये  
बड़े भावुक कवि हैं। इन्होंने 'फ़रो' तथा 'नाविक' नामक काव्य  
तथा 'पवन' नामक उपन्यास लिखा है। ये इन्दीके बड़े ऊँचे  
दाजेके कवि और लेखक होंगे।

श्रीमती नरदेवी वर्मा ✓

ये प्रयाग से कास्यकेट गङ्ग सं हाई स्कूल में पढ़ती हैं। यद्यपि  
इन्होंने अभी बहुत थोड़ा रचनाएं लिखा हैं, पर जो कुछ लिखा  
है वे वास्तव में बहुत सुन्दर हुई हैं।







## विषय-सूची

શ્રવિતા
દેવક
પૃષ્ઠ

### ईश्वर-प्रार्थना जादि

१ प्रबोधिनी—भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र...	...	१
२ शीत निद्रा—धोत्र पं० ज्ञानताप्रसाद गुप्त	...	५
३ रुद्रिणी—धोत्र पं० रामचरित उपाध्याय	...	७
४ मन्त्रेण—धोत्र पं० रामचरित त्रिपाठी	...	८
५ निधुरा का दान—धोत्र बाबू पदुमलाल-पुन्नालाल	...	१०
६ समर्थन—धोत्र राज कृष्णदास	...	११
७ पद—धोत्र विद्योती हरि	...	११
८ माया—धोत्र पं० गदाप्रसाद शास्त्री, साहित्याचार्य	...	१२
९ देवायत्री—धोत्र शिवदास गुप्त 'कुसुम'	...	१३
१० अनुगोच—धोत्र पं० उपेतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल'...	...	१३
११ मन को भारना—धोत्र पं० देवीदत्त शुक्ल	...	१४

## इष्टवन्दना जादि

१२ लक्ष्मी-पूजा—धो कबू बालमुकुन्द गुन	१३
१३ प्रवनापद, सिन्धो, मापेना—धोयुन पं० चमत्कार	१४
	१५
१४ हे खचिते—धोयुन पं० नारायणचन्द्र द्विदश	१६
१५ गंगा-दीप—धो कबू जगन्नाथदत्त चन्द्रका	१७
१६ अनुन-जल—धोयुन पं० चमत्कार चन्द्रका	१८



- ३१ निदाघी मध्याह्न—ध्रीयुत पं० लोचनप्रसाद पाण्डेय... ५६  
 ३२ वर्षा-वर्णन—ध्रीयुत पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

एम्० आर० ए० एस० ५८

### प्रकृति-छटा

- ३३ मयंक-महिमा—ध्रीयुत पं० बदरीनारायण चौधरी  
 "प्रेमघन" ६२  
 ३४ चन्द्रोदय—ध्रीयुत पं० किशोरोलाल गोस्वामी ... ६३  
 ३५ चमेली—ध्रीयुत पं० मन्नन द्विवेदी, गजपुरी ... ६६  
 ३६ चन्द्रिका—श्री बाबू भगवन्नाारायण भागवत पी० ए०,  
 एल्० एल्० बी० ६७  
 ३७ चाँदनी—श्री लाला भगवान दीन 'दीन' ... ६८  
 ३८ आमन्त्रण—ध्रीयुत पं० रामचन्द्र शुक्ल... ६९  
 ३९ भानु—ध्रीयुत गुरुमत्तसिंह 'भक्त' बी० ए०,  
 एल्० एल्० बी० ७०  
 ४० फूल—ध्रीयुत पं० गुलामातन वाजपेयी "गुलाब" ... ७१

### विश्व-छवि

- ४१ बम्बई का समुद्र-तट—श्री सेठ कन्हैयालाल पोद्दार ७३  
 ४२ दीप—श्री० बाबू जयशङ्कर 'प्रसाद' ... ७४  
 ४३ शमशान—ध्रीयुत पाण्डेय वैद्यन शर्मा 'उग्र' ... ७५  
 ४४ विश्व-सङ्गीत—ध्रीयुत पं० भगवानदीन पाठक,  
 'विशारद' ... ७७  
 ४५ चित्रवन—ध्रीयुत विद्याभूषण 'विभु' ... ७८

### उद्गार

- ४६ रत्नावली—ध्रीयुत पं० माचनलाल चतुर्वेदी  
 "एक भारतीय आत्मा" ८२  
 ४७ उद्गार—ध्रीयुत पं० मुकुन्दधर पाण्डेय ... ८३



क्र.	कविता	लेखक	पृष्ठ
६	स्वदेश-प्रेम आदि		
६७	कुटीरका पुष्प—धोयुत बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन		
		पम० प०, पल्ल-पल्ल० बी०	११४
६८	मातृभूमि—बाबू मैथिलीशरण गुप्त ...	...	११४
६९	जन्मभूमि-प्रेम—धोमान बाबू गोविन्ददास ...	...	१२०
७०	प्यारा हिन्दुस्तान—धोयुत पं० हरिशङ्कर शर्मा		
	"कविरत्न"		१२३
७१	भारतमाता की स्मृति—धो० बाबू द्वारिकाप्रसाद गुप्त		
	"रसिकेन्द्र"		१२४
७२	अभाव—धोयुत पौरसिंह पणिक ...	...	१२५
७३	अशक्त सेवी—धोयुत पं० राजाराम शर्मा ...	...	१२६
७४	स्वदेश-प्रेम—धोयुत जगमोहन "विकसित" ...	...	१२७
७५	मातृभाषा—धोमती सुमद्राकुमारी देवी चौहान ...	...	१२८
७६	अप्य स्वदेश—धोमती तोरनदेवी शर्मा 'टली' ...	...	१३०
	विविध विषय		
७७	युवा संन्यासी—धोयुत पं० माधवप्रसाद मिश्र ...	...	१३१
७८	अन्योक्ति-सप्तक—धो सैयद अमोर अली 'मीर' ...	...	१३३
७९	अव्यक्त प्रेम—धोयुत चतुर्वेदी पं० रामनारायण मिश्र		
		बी० प०	१३५
८०	आत्म-पुकार—धोयुत पं० माधव शर्मा ...	...	१३६
८१	उन्माद—धोमान ठाकुर गोपालशरण सिंह ...	...	१३७
८२	स्वप्न—धोयुत सुमित्रानन्दन पन्त ...	...	१३९
८३	आँसू—धोयुत मोहनलाल महतो गयावाल ...	...	१४१



# नवीन पद्य-संग्रह

## ईश्वर-प्रार्थना आदि

### प्रबोधिनी

आगो मंगलद्वय, सफल प्रयत्न-सखारे ।

आगो नन्दानन्द-करन, असुख के वारे ॥

आगो बलदेवानुग्रह, रोहिणि मात-दुलारे ।

आगो धीराधाजू के प्रानन ते प्यारे ॥

आगो फीरति लोचन सुखद, नान-नान-वदितकरन ।

आगो गोपी-गोप-प्रिय, नन्द-सुखद अखल-खलन ॥

होन चरत जब प्रात, चक्रपाकिन सुख पायो ।

उड़े विहंग तजि रात विरेदन गोर नचायो ॥

नय मुकुटित उत्पन्न पयल ले रात सुहायो ।

नन्दर गति अति पौन करत पंदुरा बन धायो ॥

फलिका उपवन बिकसन लगे, भँवर चडे संवार करि ।

पूरय पच्छिम दितन महं, मरुत तल्ल हल तेजधरे ॥

इष ज्योति माः मन्द पहलगन लगे अनावन ।

मां सज्जगिन दुख कुनुः मुद मुद सुहावन





3



गुन, विद्या, धन, बल, मान बहुत सबे प्रया निठिकै लई ।

अप राज राज महाराजकी, जानन्द सों सब हो कहैं ॥

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

## दीन-नि होरा

( १ )

इसा इयानव नाथ सदा है अनित तुम्हारी ।

ओ तुमने सुधि कभी दीन की नहीं बितारी ॥

कौतुक अग नै करे तुम्हारी कदम्बा नाना ।

धन, प्रभुता, बल, पुष्टि व्यर्थ है निरा दशावा ॥

( २ )

ओ कौड़ी की दुखी दीन से रोकरसे है ।

कदम्बा कदा नै ! उल्टे पर पारसे है !

मायहार ओ कंसा कटिब रोली के इल नै ।

ओर-दान तुम नाथ उले देते हो पल नै !

( ३ )

पूछे होर की कही दीन से अं मया है ।

दिल धन से परो मत सुखमें बारा है !

मारा दीन की कदा बाध तुम हो हो उल्ले

विउ अने है कृत दीन के कटक मया ॥



## कन्हैया !

जब होश था डाल धर्म का तब तुम जाते रहे कन्हैया !

आसो, धर्म के पाखंड को पाखंड रूप तक धन दुख सहे कन्हैया !

जो भारत तेरा डोला-स्थल सब का था सिरताज कन्हैया !

यही अथोतुष हो येता है गङ्गा तारा ने आज कन्हैया !

तब रहे हे तबिक सुभाषा कर पता का तान कन्हैया !

कर दे सुखद शक्ति के दाता दिव्य गुरु का मान कन्हैया !

भूमि भारत तब न रहा है ! कहीं पक्षों में धार कन्हैया !

नव नाटिका यही पड़ा है यही होंगे जोर कन्हैया !

दुखदुःखक कडियाल दुःख है मरुत बंल के सहृद कन्हैया !

सागर आकाश हने उदात्त अस्मर्य के हंस कन्हैया !

जिन्ना-सर ने दूब था है प्राद प्रलित सा देत कन्हैया !

गङ्गा की भाँति रहे जो रख को मिट न पौरव-लेख कन्हैया !

बसो प्यारे प्रणिपुत्र दुःख हो ! हाँ आसो अनुकूल कन्हैया !

होय हठा हाँ दिव्य हृदय से सकल का मुक्त कन्हैया !

सर्व-सर्व के ऐतरेय से दिया देत का बाँध कन्हैया !

आकाश तुमने न उठाया, यही रख ले रहत कन्हैया !

दुख का मेरा दुःख था है अथाप विन्दु के दल कन्हैया !

कलकल कर का तला हाँ तब दिव्य शक्ति का बंध कन्हैया !

मन कात हाँ न रहत सत्य अथवा नृत्य कन्हैया !

भूकाल का दुःख रहेत पूरा तुमने नृप कन्हैया !

बहा वलत का बहा देत देत दुःख का हाँ कन्हैया !

कात बकातु निवृत्त था है न मरुत, मरुत कन्हैया !



हरिकंद और प्रभु ने कुछ और ही बताया ।  
 मैं तो सनक रहा था तेरा प्रताप धन में ।  
 तब पता सिकन्दर को मैं सनक रहा था ।  
 पर तू बसा हुमा या फरहाद कोदकन में ॥  
 कोसल को हाथ में था करता विनोद तूरी ।  
 तू हो बिहंस रहा था नन्दुर के रत्न में ।  
 महुलाद जानता था तब सही ठिकाण ।  
 तू ही नचल रहा था मंदूर की रत्न में ।  
 बाधिर बनक रहा था पांथी की हड्डियों में ।  
 मैं ही सनक रहा था सुरपरील-खन में ।  
 कंस तुझे निरुणा जब भेद रख बदर है ।  
 दैत्य होके भगवन आया हूं मैं तरु में ॥  
 तू हर है बिजय में, छेन्दु है सुनव में ।  
 तू माय है पदव में, विस्तार है गगन में ॥  
 तू भाव प्रेन्दुकी में, ईश्वर मुसुम्भियों में ।  
 शिवालय शिवधर में तू सत्य है सुजय में ।  
 हे देवदम्पु देता प्रशिक्षा प्रशव कर तू ।  
 देख तुझे ज्ञान में सब में, तथा बलव में ।  
 कर्मकारको दुख का दण्डदाता हा सुदृढ है  
 मुनकों सम्यक कर तू हम कष्टक हारव में ।  
 दुष्ट में न हार मान्य सुख में तुम न मरु  
 देता प्रकाश ज्ञान है मेरे अन्तर सब में ।





सुनयन

धर धिया, ओ तुनवे सखे वा सिद्धे में कर धिया!

बाय सुंदरे लो देवारा,

इर-इर झिझकनाय नाय !

दुप-भात पैल खाता है, बाबा ! क्या बन्द दिया !

ਭਰ-ਛੋਟ-ਝਾਗੇਂ ਨਿਰੰਦ੍ਰ ਕੇ, ਸੁਖਾਂਤਰ ਝਾਗੇਂ ਬਿਯਾ !

दश-हज़ार को मुद्रा बनाएँ,

ਦਾਦਕੰਤੁ ਕਰਕਾ ਵਿਖੜਕਾ ।

राम-राम का नया वस्त्रा, ननर दिया, स्वाधेन दिया !

一、二、三、四

## 47

कैसे, को मरहल करे रात ।

ਜਾਂਦਾ ਹੋ ਕੇ ਕੁਝ ਧੰਨ ਦੇ ਮਿਲਣ ਦੀ ਸੋਚ ਕਰਦਾ :

॥ उर-कण्ठ २ = सुखी रवि कल-मंडिते दिवाके ।

[illegible]

ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਦੇ ਸਿਰਲੇਖ ਦੇ ਅਧੀਨ ਹੇਠਾਂ ਦਿੱਤੇ ਪੰਨਿਆਂ 'ਤੇ ਲਿਖੋ।

THE UNIVERSITY OF CHICAGO

51. The same as 50.

THEY ARE THE ONLY TWO IN THE WORLD

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

[illegible]

















## प्रार्थना

कवि, पण्डित, परिजन, प्रहृति, छात्र, रतिकर, रिक्कार ।  
 राजा प्रजा सुमेनवश करि हिन्दी को प्यार ॥२॥  
 हिन्दो-हिन्दुस्तान को भाषा विषद विशाल ।  
 जनम डेर सब लो कहैं "मां ! मां श ! श" बाल ॥२॥  
 घर को औघट घाट को, खेत प्रेत समस्तान ।  
 हाट-बाट दरवार को भाषा ये हो जान ॥३॥  
 पितृव्य शोध सके सब कछि नानु रूप जान ।  
 ताही के उदार हित पर रची समस्तान ॥४॥  
 जाले जो कुछ बन सके नावापद जरबिन्द ।  
 भक्ति-भाव ले पूजिये, खुद सदा बानन्द ॥५॥

—रामचरण गोस्वामी

## हे कविते !

सुरन्यस्ये रस-राशि-रञ्जिते, विविचरणांभरणे कहाँ गई ?  
 मलौकिकान्त-विधापिनां महा-कवोन्द्र-कान्ते ? कविते ? अहो कहाँ ?  
 "मनोहा-मन-हता गा. कहा उठा क्षण हुई नहीं ?  
 जो न नेर कमनयना रहो, यना तुहो तू कित लोक को गई ?  
 नही है भुवनान्तराल ? कहा गई है तब रन्यकरता  
 मेव हाना यदि जोव-लोक मे, कनो कहो तो मिलतो बचस्प है  
 हुआ क्या कवि कालिदास के शरीर के साथ तनो बनाय हो  
 कवि नवभूति-सङ्ग हो, हुई महीने बवलन्य के बिना हो ॥



सुज्ञान है दूंद खे जहाँ तहाँ, परन्तु तू काव्य-कले वहाँ कहीं ?  
 बना सके आकृति नो कनो यदि वृथा परिधान्त तथापि सर्वथा ।  
 बताए, जीव-विहीन देह से, सजीव की सुन्दरि क्या समानता ?  
 विचार ऐसे जगद्गुरु है जहाँ, न दर्शनों का तब भासरा वहाँ ।  
 अजेय इच्छा उस ईश की उसे, दिनष्ट कोई सकता नहीं कर ॥  
 विदम्बना ओ यह हो रही तब, समूल हो भूल उसे श्यामपि ।  
 पधारने की अनिलास हो यदि, न भा जनो तद्यपि हे मनोदरे ॥  
 बनो निठेगा ब्रह्म-भण्डलान्त का, अयुक्त भाषानय वस्त्र पर ही ।  
 शरीर-सङ्गो करके उसे सदा, विराग होगा तुझको अवश्य ही ॥  
 इसीलिये हो भवभूति भाविते, जनी यहाँ हे कविते न जा, न जा ।  
 बता तुझे कौन कुलीन कामिनी, सदा चढ़ेगी पट पर ही वही ?  
 सुरम्यता ही कमनीय कान्ति है, अनूल्य जात्मा रत्न है मनोदरे ।  
 शरीर तेरा सब शब्दनाथ है, निवान्त निरुप्य यही, यही, यही ॥  
 हुवा जिन्हें मात खस्य है यह, यही परोभूत तुझे करेगे ।  
 विठन्व सेवा बदिलन्व सेवा, दया उन्हीं पे तब देखि होगी ॥

कुछ समय गये पे योग्यता ओ दिखावे,

सदय-हृदय होके नृ-उत्ती के यहाँ जा ।

न उचित अदला का नित्य स्वच्छन्दबात,

बत अधिक कहं क्या हे महानोद दासि !

—नर.वीरप्रसाद द्विवेदी

गंगा-गौरव

( १ )

विधि दरदायक की सुज्ञ-तनूति वृद्धि.

तनु सुर नायक का सिद्धि की सुनाका है





[illegible][illegible][illegible]



॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

— श्रीकृष्णाय नमः —

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

•

•

•

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

























# पौराणिक

## मदन-दहन

( १ )

विराजि आसु काशपर रतिदुद्धर मरु दुखि भाग्यो ।  
 कात्र सृष्टि कर हेतु आदिजन दृढ़ता साधये ॥  
 तदि विरिद्धि लखि मावहत साधत पुनि धासो ।  
 इन्द्रियहित विर भाहिं कात्र हो विदि विवालो ॥  
 विद्व होवहार एति मार कर, भई पात सेतेष आ ।  
 कधि एते भागमा विद्व ददत, तग्यो भ्याव विभुवन रिता ॥

( २ )

आलव भादि बहु कदव अतु धारत सारवावव ।  
 मरु मरु हर मोवि दवात आदव कायलव ॥  
 तव कदा कलगेरि दुख विर लम्बुव करी ।  
 ललवति विरिद्धि लम्बुव हो कले मरुई ॥  
 हो लुग विरिद्धि लम्बुव हो मरु मरु मरुई कला ।  
 तव लुग विरिद्धि लुग मोरि कलु, ललव मरु विरिद्धि ललव ॥

( ३ )

लुग ललव लुग लुग ललव ललव लुग लुग ।  
 ललव ललव ललव ललव ललव ललव ललव ॥  
 ललव ललव ललव ललव ललव ललव ललव ॥  
 ललव ललव ललव ललव ललव ललव ललव ॥



क. तु समा कुञ्चित किये दच्छिन पांत्र कन्ध लुकाय ।

मद घाम पदकरि जप्र विठसत दुविय नेन दयाय ॥

नित्र तपस्या निरखि <sup>( ८ )</sup> बाधित फोप फरि त्रिपुरारि ।

भये विकट स्वरूप, जो नहि नेक जात निहारि ॥

भंग करि भृङ्गुटीन दोन्हो तृतीय नेन उचारि ।

कहो जाखो उजालमाल प्रवण्ड अति भयहारि ॥

<sup>( ९ )</sup> "उमहु दे प्रनु उमहु फोप फराउ, शिनुवन पाल !

होय व्योम प्रवृत्त जो टगि देवन्देर विहाल ॥

सासु प्रथमदि प्रलय फारनि ललाट पख की उजाल ।

नियो मारदि छावत अति नरो तेज कराल ॥

<sup>( १० )</sup> अति असादरनित्र मोनति सकल रोधनहार ।

अन्तनाथ भुलाय, रति धर मोह \* किय लपकार ॥

तपोदर तेदि विषय-विटरदि ठड्डित सम भरहाय ।

गपन सद ने गुन तपयोगनस्तनीर दिहाय ॥

<sup>( ११ )</sup> यह धरिज लखि शोच्यो दे मयनीत मदान ।

गई विना-भरवदि सरदि, नव अति किये मज्जन ॥

<sup>( १२ )</sup> स्वारपरात बहु लोचन ते अविचल दालां ।

अभिनाविन देहाय तेदि विज काज बनाई ॥

दे तिन दे डर परत आवि भावा बहुत भारो ।

तब राउ पुंउ रहय ऊहि बडि विरद बिलारो ॥









जाते टोला-विपुल नट है यात्रा भी बांध जाया ।

कोई को भी न जर उनके सेउ छो देखता है ॥

प्यारे होते मुद्रित जितने कोतुखों से छटा पे ।

ये आँखों में विपन इव है इरीकों के लगाने ॥

प्राण पाठा रजिर नदको छो बड़े कार से पा ।

काँठ काते पुच्छ पड़ता बाटता कुरता पा ।

ये बातें है सरस बबली देखते पाद जाती ।

हो जाता है नपुंजर और लिख भी इयकारी ॥

हा ! ओ पंदो सरसर से विरह को मोरको पो ।

सो जाते ये मलिनरव भी नूठ होके पड़ी है ॥

ओ जिन्हें से मलिनरव मूरि पों सुगंध को ।

सो श्रमला पान दिखता उन्नता है बगली ॥

प्यारे जयो ! सुन बरता जात्र मेते कनो है !

क्या होता है न जर इतकी ध्यान मुझे लिखा था ।

ये से होके विरह मरने बार को है दिखने ।

हा ! ये खंभ सरस विपु है क्या बली पार जाते !

मेसे नूखे सरस मलिनरव जाते को दोरिकावे ।

मेसे नूखे पुरररव के सेपु से पार जाते ॥

हा ! पय नपुंजर इतना मेरे कल ररता ।

मेसे नूखे मलिनरव मलिनरव मलिनरव ॥

मेसे नूखे पुरररव मलिनरव मलिनरव मलिनरव ॥

मेसे नूखे पुरररव मलिनरव मलिनरव मलिनरव ॥

मेसे नूखे पुरररव मलिनरव मलिनरव मलिनरव ॥









‘ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

‘ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

## ሀይለማርያም

‘ሀይለማርያም—

|| ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

—ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

|| ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

‘ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

|| ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

‘ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

|| ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

‘ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

|| ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

‘ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

|| ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

‘ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

|| ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

‘ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

|| ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም

‘ሀይለማርያም ስም የሚገኝ ሀይለማርያም











































## चन्द्रिका

देवदत्त-पक्ष-निधि में तिथि पूर्णिमा की,

देती उमङ्ग मन में सब प्रमियों को ।

देवी, पुधांसु किरणों बिजला रदा है,

खंसार में अचर अङ्गुल भादन का ।

है तिल्यु भी उलझता तप बार चन्द्र ।

जवा मन्दभादन बढ़ा सुमने पर है ।

रक्तसार रूप पर मुख हुई अनन्त

है भावता उद्दिप-मुन्दर कालिका ।

दा । शक्ति कावरेण भी करके अकार

लक्षण बार तप है करता कदव

जो कभी उलझि रहै का सुम दुख है

प्राप्ति सुन्दर कलका कलक निरर ।

है यथा किन्ना कामक न अचलाय रसा

है ते सदा विरज रसायन की रस का

का रसायन पूरा सुनिधि निज रसनाय

है रसायन सुन्दर रूप रस रसायन

भागी जवा अमल की अमल रसायन,

का है निज रसायन निज रसायन

रसायन सुन्दर रूप रसायन रसायन

है रसायन रसायन सुन्दर रूप रसायन

की रसायन रसायन रसायन रसायन

है रसायन रसायन रसायन रसायन

















गिरि-संकट में जीवन-स्रोत नन नारे चुप रहता था !  
 कल कल नाद नहीं था उसमें, मन को यातन कइता था !  
 इसे जाह्नवी सा आदर दे किसने मंट चढ़ाया है ?  
 अंचल से सस्नेह बचाकर छोटा दीप जलाया है ॥  
 जला करेगा वसुस्थल पर यहा करेगा लहरी में ।  
 नाचेगी अनुरक्त बोंबियां रंजित प्रभा सुनहरी में ।  
 बट-बट की छाया फिर उसका पैर चूमने आवेगी ;  
 सुत खगों की स्मृति नीरव फलख से गान सुनावेगी ।  
 देख नश्र सौन्दर्य प्रकृति का, निर्जन में अनुरागी हो—  
 निन्न प्रकाश डालेगा, त्रिषते, प्रखिल विश्व समभागी हो ।  
 किसी नाधुरे स्मित का होकर यह संकेत बताने को ।  
 जला करेगा दीप, चढ़ेगा यह स्रोत यह जाने को ॥  
 — जयशंकर 'प्रसाद'

### इमशान

सैकत-रुप्या एक तुन्दारे पास है,  
 दिव्य देव-सरि पात्र एक जलशान का ।  
 अर्धनाभ तक अन्धेरेमें वास है,  
 शन्दु-फलों से दीपक पाते शान का ।  
 एकमात्र आहार तुन्दारा वायु है,  
 अन्धर है प्राचीन एक आकाश हो !  
 सुनता हूं मैं अन्त-हीन तब वायु है,  
 मृत्यु प्रिया विल्यात पुत्र है नश्वर हो !







## चित्रवन

### ( चित्रकूट का )

हे सौन्दर्यांगार ! वषट्पनि ! सुखमासार मनोहारो !  
 हे उपवन की अनुलितशोभा ! हे सजीवउदितनुधारो !  
 दिग्बद्धतियो ! भव्यभूतियो ! विधिविविधकृति ! चपलाओ !  
 विचरणशोलाकमलपङ्क्तुरियो ! प्रेमपुतलियो ! बहलाओ ॥  
 अशो प्रजापतिविश्रप्योलिओ ! बहुविधरंगित फलिकाओ !  
 हे संचितिनोहिनिमालाओ ! सुमनविहारिणो रसिकाओ !  
 हे द्रुतगामो मानसगतियो ! हे परिवर्त्तनशोलाओ !  
 हे ज्ञानमंगुरमंगलध्वनियो ! हे अस्यायीलीलाओ ॥  
 फूलों में पैखुगी, पत्तों में तुम पत्ती बन जातो हो ।  
 इस विधि-स्फुल्ले प्राण बवाकर नित पराग छितरातो हो ॥  
 तुम फूलों पर बलि जातो वे हृदय चीर बिठलाते हैं ।  
 देखें इन तितली फूलों में कौन अधिक बढ़ जाते हैं ॥  
 विट्पावलो फली फूली है लतापुञ्ज मंजुल छाये ।  
 वातायन-युत-कुञ्ज-मनोहर कहीं देखने में आये ॥  
 गुञ्जित भृङ्ग हसित पुष्पों पर रस लेने को आते हैं ।  
 कुभा न प्यासों के घर आता प्यासे उस तक आते हैं ॥  
 फलित फलाप फलाप तानकर नर्तक बना फलापी है ।  
 मेघ मृदङ्ग गंभीर-गर्जना व्योमस्तल में व्यापी है ॥  
 सौदामिनो मंजु मुरली भी कभी कभी सुन पाते हैं ।  
 मंगलवार मोरनो गार्तों उत्सव जीव मनाते हैं ।  
 मेघक है या नील-गगन में इन्द्र-चाप के तारे हैं ।  
 या है सुमन विविध विश्र या बहु रंगो अति प्यारे हैं ॥









यद्यपि छट्टु है स्रग्दारी है फल मोठा देनेवाले ।  
 रोकर भी औरों के दुख को ये ही हर देनेवाले ॥  
 पोटस्तत्रक पोटमपि मानो हरि शिखा पर फैलाये ।  
 घटा अंधेरी देख इन्हें ये धानबोर लेने आये ॥  
 आपस में जय फूट हुई तो काँव-काँव करते भागे ।  
 निम्न करुण पत्तोंसे हर हर अन्य द्विजों ने ये त्यागे ॥  
 दो सइकार सहाइर मानो या दोनों सइकारी है ।  
 पचपत्र के साथो दोनों हैं लग्नो भुजा पसारो है ॥  
 मानो मिले बहुत दिन पीछे गाढ़ाङ्गिन करते हैं ।  
 फटरव मिल वे पातवीर से पयिक्तों के मन हरते हैं ॥  
 बिर संवित फल लुटा चुके हैं भला छौन ऐसा दानी ।  
 वार्षिक यज्ञ क्रिया करते हैं देवल पेय पवन पानी ॥  
 कोयल बेंगो हुई झाल पर रुखको मझिमा गाती है ।  
 गये हुए उन सफल दिनों को तिर से पाद दिटातो है ॥  
 पिक अपनी काकड़ी चुनाकर नोड़ खो सारे प्राणो ।  
 हाँ, रसाल के सरस फलों से हुई मधुर तेरी चामो ॥  
 शेर स्वर्गो को भूछ गई क्या पंचम स्वर जो बरनाया ।  
 कुह कुह क्या कहती है फड जा तेरे ओ में आया ॥

—विद्यभूषण 'विभु'





✓ दमयन्ती के "एक चोर" की माँग हुई बाजी पर।  
 धेश-निकाला स्वर्ग पनेगा, तेरी नाराज़ी पर!

श्रीभक्तयो मनुहार—

किन घड़ियों में तुझको भाँका तुझे भाँकना पाप हुआ !  
 आग लगे घरदान निगोढ़ा मुझ पर आकर शाप हुआ !  
 जाँव हुई, नभ से भूमंडल तक का व्यापक नाप हुआ !  
 अगणित बार समाकर भी छोटा हूँ—यह सन्ताप हुआ !  
 अरे अशेष ! 'शेष' की गोदी तेरा बने बिलौना सा ।  
 आ, मेरे आराध्य ! ज़िला तूँ में भी तुझे बिलौना सा ॥  
 —“एक भारतीय आत्मा”

### उद्गार

मेरे जीवन की लघु तरणी ! आँखों के पानी में तरजा ॥  
 मेरे उर का छिपा पज़ाना, अड्डहार का भाव पुराना,  
 बना आज तू मुझे दिवाना, तब स्वदे-बूँदों के डर आ ॥ १ ॥  
 मेरे नयनों की चिर आशा, प्रेम-पूर्ण सौन्दर्य-पिशासा,  
 मत कर नाहक और तमाशा, आ मेरी आँखों में भर जा ॥ २ ॥  
 मृदुल मनोरथ-तरु में फूला, फूल गङ्गा में अपने भूला,  
 भूल चुका बस जो कुछ भूला, अब अपनी डाली से भर जा ॥ ३ ॥  
 पड़ो हृदय में बिता कराता, ऊपर नभ तक उठती ज्वाला,  
 मरण-दुःख ! के मुक्कामाला, गिरकर अब उसमें तू मर जा ॥ ४ ॥  
 ये मेरे प्राणों के प्यारे ! इन अधीर आँखों के तारे !  
 पड़त हुआ मत अधिक सतारे ! बार्ते कुछ भी तो अब कर जा ॥



## मन-मान

नछली, नछली कितना पानी ? जरा बता दो बाज,  
देखूँ कितने गहरे में है मेरा जीर्ण जहाज ।  
मन की नछली दुपको खाकर फइ दो कितना जल है,  
कितने नीचे, कितने गहरे, कहीं घाड़ का पल है ?

पंखिल घल, सुनील जल, डिल-निल, हुए कहीं है एक ?

नछली नछली मुझे बता दो, कहीं घाड़ की रेख ॥

कई बार तल से टकराया, फिर भी पता न पाया,  
ऊँ हो पैठा, त्यों ही उरुना कर फिर से उतराया ।  
जल-निधि से उलीचने की टपकाये बिन्दु बनेक,  
चिन्तु टिट्टिहरी का घोरत उड़ा, बघाह जल देख ।

जब तुमसे कहता हूँ, मुझको जरा बता दो मोन ।

कितने नीचे तल की भूनि तिमिटती है संकीर्ण ?  
तल तगें दड़ भावो है होता हूँ ईरान,  
ये लटवो बहरेँ सिंचित करती टटका मैदान ।  
यहाँ, वहाँ सर्वत्र आप ही आप जलधि का क्षार,  
कीर्तित हो जाता है मन जीवनतट पर प्रतिधार ।

कैसे पड़ जल का प्लावक विस्तार होवेगा शान्त ?

मन की नछली, क्यो हृदय कैसे होगा विधान्त ?

तुम्हें डूबने हो मैं क्या सुख निद्रता है जल-बोच ?  
जाने मैं लंकोच दिया कतों हो क्यों पल-बोच ?  
मेरा जल घल एक हो खा है, न करो कुछ सोच,  
शायनाश का अर्थ हो गया है जंवन का टोच ।



( २ )

झेरनिधि की धी सुनतरंग, सरलता का न्यारा निर्भर ।  
हमारा यह सोने का स्वप्न, प्रेम की चमकीली नाकर ।  
शुभ्र ओ धा निनेध गगन, सुमग मेरा संगी जीवन ॥

( ३ )

बलशित जा खिसने चुपचाप, सुना छरके सम्मोह तान ।  
दिवाकर माया का साम्राज्य, पना ढाला इसको अज्ञान ।  
मोह-मदिरा का आस्वात्तन, किया क्यों हे भोडे जीवन ।

( ४ )

तुम्हें दुहराता है नैराश्य, हैला जाती है तुमको आश ।  
नचाता है तुमको संसार, लुभाता है तृष्णा का दास ।  
मानते विप को संजीवन, मुग्ध, मेरे भूडे जीवन ॥

( ५ )

न रहता मौरो का आह्वान, नहीं रहता फूलों का राज ।  
कोकिला होती अन्तरध्यान, चला जाता प्यारा शत्रुराज ॥  
अस्तमव है विरसनेलन, न भूलो क्षण-भंगुर जीवन ।

( ६ )

विरसते, मुरझाने को फूल, उदय होता छिपने को चन्द ॥  
शून्य होने को भरते मेघ, दीप जलता होने को मग्द,  
यहा किसका अन्तत यौवन ! अरे अस्थिर छोटे जीवन !

( ७ )

छलरती जाती है दिन-रेन, लयालब तेरी प्याली मोत ।  
ज्योति होती जाती है क्षीय, मौन होता जाता संगीत  
करो नयनों का उन्मीलन, क्षणिक है मरवाडे जीवन !





रो, हुन्दा तू सत्य बता दे, क्या है यह सब साया है ?

या स्मृति है, जपया कविको फलित विल्लुति छाया है ?

—उतांऊहुतेन 'नटवर'

## तुम और मैं

( १ )

तुम तुझ दिनालय मृदु, जोर में बंचल गति सुर-सरिता ।

तुम विमल हृदय-उल्लास, और में शान्त-शानिनी कविता ॥

तुम प्रेम—और में शान्ति ।

तुम सुखापान घन-मन्थकार, मैं हूँ मतवाली चाँति ॥

( २ )

तुम दिनकर के धर-किरण-झाड़, मैं सरस्वति को मुसकान ।

तुम वर्षों के बोंते वियोग, मैं हूँ पिछली पड़वान ॥

तुम योग—और में सिद्धि ।

तुम हो रागातुग निरुल्लस तप में शुचिता सरल समृद्धि ॥

( ३ )

तुम मृदु मानस के भाव, और में मनोमोहिनी जाया ।

तुम नन्दन-यन-धन-विटप, और में सुख-छोतल-तल छाया ॥

तुम प्रेम - और में काया

तुम शुद्ध सच्चिदानन्द मय, मैं मनोमोहिनी जाया ॥

( ४ )

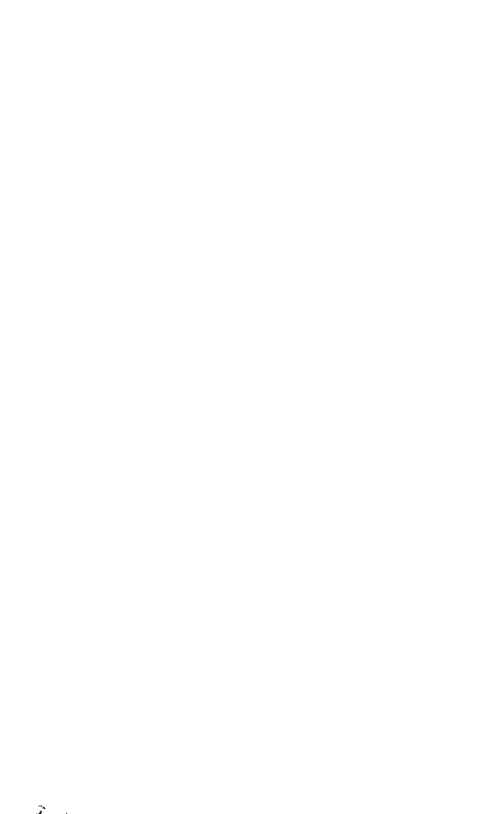
तुम प्रेममय के कलश, मैं पेजों काट-नायिनि ।

तुम का-पल्लव-बंहल तिलार, मैं दगाहुत विरह-रानिनी ॥

तुम पय हो, मैं हूँ रेणु ।

तुम हो राधा के मन-मोहन, मैं उन जपों को वेणु ।







## विदा !

मायाओं के स्वप्न, क्षणिक जीवन के विषम विषाद विदा !  
 भावों के सुख-स्वर्ग, कलरना के सुन्दर प्रासाद विदा !  
 विश 'मह' की उलमप छाया भ्रान्ति-पूर्ण उन्नत भ्रंशान्ति !  
 उद्गारों के घेग, महत्याकांक्षा के उन्माद विदा !  
 नाया और ममत्व, वासना के मत्वाले राग विदा !  
 विश्व-कुसुम के पागल करनेवाले मधुर पराग विदा !  
 विशा पेशना और दृश्य को ध्वज कथा के उपसंहार ;  
 परिधि-रहित परिधि, और उस मौन-व्यथा की आग विदा !  
 तेलुर तृप्त का उतारडो सी है शून्य उन्नत विदा !  
 चौवनमद के दोषानेपन की पद तरल तरङ्ग विदा !  
 विशा भुवों के विस्तृत सागर की उच्छृङ्खल उच्च उन्नत ;  
 और वाश के भाषण स्वर की ध्वनि-प्रतिध्वनि के व्यंग विदा !

—मनदीनरूप शर्मा



शेज बाहुको नहि सापो नाउ, रिता, सुउ, गरी ।  
 बरने करम आरने संगी और भावना मोरी ॥  
 सत्य सदायक स्थानि सुखइते देहु प्रीति द्विज जोरी ।  
 नाहि तु किर पावार हरी शेज बाउ न पूछि सोरी ॥

— प्रतापनारायण निम्न

### प्रशस्त-पाठ

हर कोर प्रगाथ-परोरिधि के उस पार गया उल-पान रिता ।  
 निल प्राप, बरान, उशन रही, धन दे ब समान सन्सार रिता ॥  
 कहिये प्रभु धिय निजा बिसकी, करि कउर बलबल भ्याव रिता ।  
 हरि 'शङ्कर' सुखि ब राय लया, बनराउक निमैठ हार रिता ॥

एक पाठ प्रबलक प्रनाइ-नरे करन प्रब उग्रमय गये ।  
 एव रोड भवारक आगत ने मर केरक पार कनार गये ॥  
 धन, धाम बितार पराउउ वे परदार कसंकर समार गये ।  
 हरि 'शङ्कर' विधि मरारपथे, उर सुख सुखीय अमार गये ॥

उपलब्धि के पुने सब धरे, रवि के अनुसार सुखार सुखे ।  
 एव धन बलविधि मर उर, उर देह सुखार विचार सुखे ॥  
 सुख तीरक पार मर-उ ररे उग्रमय सुखार विचार सुखे ।  
 मर 'शङ्कर' क ब रिता ब उर धन कोर रिता मर मर सुखे ॥





## ज्ञानारुणोदय

( १ )

विघन-विनासनहार ! अघन घन हेत प्रमञ्जन॥  
परम रुचिर करि चरित हृदय विचरत मन रखन ॥  
लोला अगम अपार सकुञ्ज वस्तुन मई दरसत ।  
व्यापि रह्यो सब माँहि यादिते सोमा सरसत ॥

( २ )

तुमही सुमन सुगन्ध पाटिका तुमही मालो ।  
तुमही तद्वर सुफल तुमहि दाली हरियालो ॥  
तुमही सख्या दिवस निसा अब तिनके फारन ।  
तुमही राजत तेज तिमिर तुमही जगधारन ॥

( ३ )

दृष्टि तहां लगि जाइ जई लगि चरित तिहारो ।  
जान जगत यह फाड, जौन यह नैन निहारो ॥  
तुम परिवर्तन विषय फेरि छन छन प्रति फरह ।  
बस प्रभुता तउ निजजन पे ममता बति घरह ॥

( ४ )

तव सरनागत नाथ ! बचन आरत उन्धारत ।  
परिवर्तित जग माहि बाजु सेवक पगु धारत ॥  
तव चिन्तन मन माँह तिहारो नुजस बचनवर ।  
तुम्हरी सेवा माहि करन मेरो रह तत्पर ॥







## ज्ञानारुणोदय

( १ )

विघन-विनाशनहार ! अघन घन हेत प्रमथन\* ।  
 परम रुचिर फरि चरित हृदय विचरत मन रञ्जन ॥  
 लोला जगम अपार सकल वस्तुन महँ दरसत ।  
 व्यापि रहो सब माँहि याहिते सोभा सरसत ॥

( २ )

तुमही सुमन सुगन्ध पाटिका तुमही माली ।  
 तुमही वस्त्रर सुकल तुमहि डाली हरियाली ॥  
 तुमही सन्ध्या दिवस निसा अरु तिनके फारन ।  
 तुमही राउत तेज तिमिर तुमही अगधारन ॥

( ३ )

दृष्टि तहां लगि जाइ अहाँ लगि चरित तिशरो ।  
 जान जगत यह फाह, औन यह नैन निहारो ॥  
 तुम परिवर्तन विश्व धरि छन छन प्रति करहु ।  
 अस प्रभुता तउ निजजन पे ममता अति धरहु ॥

( ४ )

तउ सरनागत नाथ ! बचन आरत उच्चारत ।  
 परिचित जग माहि जानु संवक पगु धारत ॥  
 तउ चिन्तन मन माँह तिशरो मुझस बचनपर ।  
 तुम्हरो सेवा माहि करम मेरो यह ठहर ॥



## फूल की कहानी

दो दिन खेल गया उपजन में ।

रूप बनोया टेकर बाया, खेला-कृश हँसा-हँसाया ।

शिव-सुरभि से घन मंदकाया ॥

इससे पढ़कर भडा और क्या रक्खा है जीवन में ॥१॥

गुप्त-सौंदर्य देखकर प्यारा, रोऊ गया नाछो हत्याया ।

और धिया डालो से न्यारा ॥

तोड़ के चढा दुष्ट देवने दया न आई मन में ! ॥२॥

जोड़ित सब ने सोस चढ़ाया, मृत हो जाने पर टुट्टाया ।

धर से बहुत दूर फिचवाया ॥

लपो लो दुनिया सदैव-सी बनने मन के धन में ।

दो दिन खेल गया उपजन में ॥३॥

—बदरोनाथ भट्ट

## सज्जनो का स्वभाव

दिनकर बनल्यो सो स्वच्छ देता सुहास ।

सधि कुन्द गयो सो रस्य देता विशास ॥

जलद बाछते है भूमि में जन्मु-पारा ।

सुजन बिन बदे हो साधते कार्य साय ॥

रिखत बलि सुधा छे देख के पुत्र प्यारा ।

अनि-दर स से है लूटो दुखकाय ॥

जखन कुदता ओ रंग कुयो जनों को ।

सहस नरक होतो है दया सज्जनो का ।

व्यस-हित होता है बरहि-म्यात ।





## फूल की कहानी

दो दिन खेल गया उपवनमें ।

रूप अनोखा लेकर आया, खेला-कूश हँसा-हँसाया ।

दिव्य-सुरभि से वन मँदकाया ॥

इससे बढ़कर भला और क्या रखा है जीवन में ॥१॥

गुण-सौंदर्य देखकर प्यारा, रोऊँ गया माझी हत्यारा ।

और किया डालो से न्यारा ॥

तोड़ ले चला दुष्ट येवने दया न आई मन में ! ॥२॥

जीवित सब ने सोस चढ़ाया, मृत हो जाने पर दुकराया ।

घर से बहुत दूर फिरोवाया ॥

लगी रही दुनिया सदैव-सी अपने मन के धन में ।

दो दिन खेल गया उपवन में ॥३॥

—बदरीनाथ भट्ट

## सज्जनों का स्वभाव

दिनकर फमलों को स्वच्छ देता सुहास ।

शशि कुमुद गणों को रम्य देता विकास ॥

जलद बरसते हैं भूमि में अम्बु-धारा ।

सुजन बिन कहे ही साधते कार्य सारा ॥

विकल अति क्षुधा से देख के पुत्र प्यारा ।

अननि-हृदय से है छूटती दुग्धधारा ॥

उखकर कुदसा उषों दोन दुःखी जनो की ।

सहज प्रकट होता है दया सज्जनों की ॥

लहर-रहित होता है पयोधि-प्रशांत ।



कहीं शय्य से श्यामल खेत खड़े, जिन्हें देख घटा का भी मान घटा ।  
 कहीं कोसों उज्जाड़ में झाड़ पड़े, कहीं बाड़ में कोई पड़ा सटा ।  
 कहीं कुञ्जलता के बितान ठने, सब फूलों का सौरभ या तिमटा ॥  
 झरने झरने को कहीं झनकार, फहार का हार विचित्र ही था ।  
 हरियाली निराली न माटी लगा, फिर भी सब ढङ्ग पवित्र ही था ।  
 क्षणियोंका तरोवन था, सुरभी का उद्धारर सिद्ध भी मित्र ही था ।  
 बस जान दो सात्विक सुन्दरता सुख संपत्ति शांतिका वित्र ही था ॥  
 कहीं झोठ किनारे बड़े बड़े प्रान, गृहस्थ निवास बने हुए थे ।  
 खपरैलोंमें फड़ू करैलों को बैठ के, खूर तनाव ठने हुए थे ।  
 जल शीतल बन्न उही पर पाकर, पक्षी घरों में घने हुए थे ।  
 सब ओर स्वदेश, स्वजाति, सम्राट् मलाई के ठान ठने हुए थे ॥  
 इस भांति निहारते लोककी लीला, प्रसन्न थे पक्षी फिर घर को ।  
 उन्हें देखते दूर ही से मुख खोल के, बच्चे चले चट बाहर को ।  
 दुलाराने, बिलाने, पिलाने से था, नवकाश उन्हें न घड़ी भर को ।  
 कुछ ध्यान ही था न खबूतर को, कहीं फाँट चढ़ा रहा है शर को ॥  
 दिन एक बड़ा ही मनोहर था, छबि छाई बसन्त की कानन में ।  
 सब ओर प्रसन्नता देख पड़ी, उड़-चेतन के तन में, मन में ।  
 निकले थे कपोत-कपोतो कहीं, पड़े गुच्छ में घूम रहे वन में ।  
 पहुँचा यहाँ घासडे पास शिकारी, शिकारकी ठान में निर्जन में ।  
 उस निर्दय ने उसी पेड़ के पास, बिछा दिया जालकी चौकल से ।  
 वहाँ देख के बन्न के शाने पड़े, चले बच्चे बनिश ओं पे छल से ।  
 नहीं जानते थे कि यहाँ पर है, कहीं दुष्ट मिठा पड़ा भूतल से ।  
 बस, फाँस के बाँस के बन्धन में, फर देगा हलाक हमें बल से ॥  
 जब बच्चे फँसे उस जाल में जा, तब वे घबड़ा उठे बन्धन में ।  
 इतने में खबूतरों बाँई यहाँ दया देख के व्याकुल हो मन में ।  
 कड़ने लगा हाथ हुमा यह क्या ! सुत नरे हलाक हुए वन में ।  
 अब जाल में जाके मिरूँ इतने सुख ही क्या था इस जंवन में ॥



पर ओ मन भोग के साथ ही योग के काम पवित्र किया करता ।  
परिवार से प्यार भी पूर्ण रखे, पर-पौर परन्तु सदा हस्ता ।  
निज भाव न भूल के, नापा न भूल के, विघ्न-व्यथा को नहीं दर्शा ।  
कृतकृत्य हुआ हँसते-हँसते, वह सोच-संकोच बिना मरता ॥  
प्रिय पाठक ! आप तो विद्वद् होते हैं, फिर आपको क्या उपदेश करें ।  
शिर पे शर ताने बहेलिया फाँट खड़ा हुआ है यह ध्यान धरें ।  
दशा अन्त को होनी क्षणोत् क्षणोत् ऐसी, परन्तु न आप जरा भी डरें ।  
निज धर्म के काम सदैव करें, कुछ बिन्दु यहाँ पर छोड़ मरें ॥

—रुनारायण पण्डित

### नकली फूल

( माया के प्रति जीव की उक्ति )

नालिन, कैसे हैं ये फूल ?

क्या ये मेरे स्वामी को भी होने लवि-अनुकूल ?  
होगी कैसी वह फुलवारी, शोभित कैसी होगी क्यारी,  
होगी वहाँ बिड़ो सब पिछकर ज्यों सुन्दर मखमल !  
कैसी इनको छुटवूँ देखें, कह दो तो इनको छूँ देखें,  
क्या करती हो—करते हैं हम पड़ते दान वसूल !  
बोली तो, लो दान पतानो, अपना सौदा तुम्हीं चुकाओ,  
'जीवन' अच्छा है जो इन पर गयी सनी मति भूल ।  
उब से मैंने देखा इनको, जीवन का धन देखा इनको,  
क्या इतने सुन्दर स्थानों को लोग नहीं डूबत ?  
यह क्या ! नेक सुवास नहीं है—इस अंग में विश्वास नहीं है,  
हाय हाय ! यह क्या कर डाटा, जीवन गया समूल ॥

—देवीप्रसाद गुप्त



नोप-भावा इतिवन्तः यो तत्त्व वीरता पञ्च नै  
 पाञ्च करके इति-प्रतिष्ठा उत्तम-मूर्ति यो पाञ्च नै  
 विनोद विचार विरुद्ध वचनों से नारद-मण्डप गुं जाऊँगा  
 तत्त्वतः कर तत्त्वतः देय को प्रतिष्ठा पूज्य पुत्राङ्गना  
 नातिन-विराट् को दानं प्रतिष्ठा कर दिया-नारी-प विवर्धना  
 तद्दृष्टता को भोक्त दहाकर इत्यन्तरा को हर दृष्टा  
 वन्द्य-वर्ग नारद-सनाद को सेवा तत्त्वतः करके नै ।  
 अनुपम भावाङ्गना देय के तन्तुष तदा घट्टा नै ।  
 उदित तत्त्व नद नारी से मुक्ति मुक्त-को नारी-प  
 पर इति पर नारी नै नेप नव भावन्द नारी-प ?  
 तन्तुष-तत्त्व नारी, इति-प्रतिष्ठा न तत्त्व-परी ।  
 नै नारी-इति को गुण-तत्त्व-उदित न नारी-प  
 भावन्द-नारी तत्त्व-परी नै नै विरुद्ध नारी-प  
 पत्त-तत्त्व तत्त्व नारी तत्त्व नै तत्त्व-परी नारी-प  
 तत्त्व-तत्त्व तत्त्व तत्त्व नारी तत्त्व-परी नारी-प  
 करके तत्त्व विरुद्ध तत्त्व नै तत्त्व-परी नारी-प  
 ददा देह-नै देय इति तत्त्व ददा के तत्त्व तदा  
 ददा नै नै नारी-प तदा तदा नारी-प तदा  
 ददा-तत्त्व तत्त्व नै नारी-प तदा नै तत्त्व-परी  
 तत्त्व तत्त्व नै नारी-प तदा तदा नै तत्त्व-परी  
 नारी-प नारी-प तत्त्व नै नारी-प तदा तदा  
 देय नारी-प तदा को नै तत्त्व तत्त्व नै तत्त्व-परी  
 तत्त्व तत्त्व नै नारी-प तदा तदा तत्त्व-परी  
 ददा तत्त्व तदा तदा तत्त्व तदा तदा तदा तदा





( २ )

किया कभी न विचार साध क्या अपने लाये ;  
 होने क्या छे विदा—न समझे, पाप कमाये ।  
 सदा त्याग न किया व्यर्थ हो यासर खोये ;  
 यात्री इते परन्तु राह में काँटे बोये ।  
 हा ! कर्माधिन अपकीर्ति हो, छोड़ चले संसार में ;  
 हम उत्तर देंगे क्या भला, ईश्वर से दरबार में ?

( ३ )

बल-बलतर आयु, न तब भी सुख फमाते,  
 हाथ हमारे भाव बिगड़ते हो है जाते !  
 विषयो में फँस रहे, न मन का मेल छुड़ाते ;  
 कर्माधिन नित नये जाल जग में फैलाते ।  
 हम शुचि सत्त्वे ध्रुव ध्येय को प्राप्त न होना चाहते ,  
 तनु-तरणो को नव-सिन्धु में वृथा डुबोना चाहते ॥

—“कर्म”

### पुस्तक-प्रेम

मैं जो नया ग्रन्थ विलोकता हूँ, माना मुझे सो नव मित्र सा है ।  
 देख उसे मैं नित बार-बार, मानों निला मित्र मुझे पुताता ॥  
 “ब्रह्मन, तजो पुस्तक-प्रेम भाव, देता बना हूँ यह राज्य सारा ।”  
 कहे मुझे यो यदि ब्रह्मवर्ती, “देता न राजन् कहिये” कहूँ मैं ॥  
 ब्रह्मचर्य भण्डार नय हुआ है, सुखचंदा जो मन गेड में हो ।  
 बतारय, हे मन निबद्ध ! क्यों तू किसी के किर शन को मैं ॥



कर्मों के अनुसार हमें वद दुख देता है ,

उनके हो अनुकूल हमें वद सुख देता है ।

फिन्तु कर्म के जटिल बन्धनों-मध्य पड़े क्यों ?

हरि की इच्छा-पूर्ति-हेतु हम यहाँ सड़े क्यों ?

नन-स्पर्श के लिये उड़ल रवि शशि लां जाना,

खा पयंत से चोट, उलधि हलमें गिर जाना ।

काम, क्रोध, मद, लोभ आदि से पोड़ित होना,

चिंताओं का भार व्यर्थ जीवन-भर ढोना ।

अन्य व्यक्ति के लिये कभी कोई न करेगा ।

जब लौं उससे स्वार्थ स्वयं उसका न करेगा ।

बौर, हमें कर विवश पड़ाता है यदि हमको ।

निज विनोदके लिये सताता है यदि हमको ।

अत्याचार-निन्दित ! उसे फिर राजस्र कदिये !

परमपिता कह उते स्मरण क्यों करते रहिये ?

स्वेच्छा बिना कदापि यहाँ हम जा न सके हैं ।

बिना किसी सौंदर्य कदापि लुभा न सके हैं ।

मुक्तो पड़ता ज्ञान सुखों के पीछे फिरना ।

उनका पा आभास और दुःखों में गिरना ।

विधवाओं का रुदन ! विफलकर अहं भरना ।

माता का निजपुत्र के लिये कंदन करना ।

निज विरह से निज-मण्डली का दुख पाना ।

देश-बन्धुओं का विषाग में अध्रु बहाना !

स्वेच्छा के अनुकूल क्रियायें हैं ये सारी ।

इन्से बनती सरस विरस जीवन की क्यारी ।



दिन-रात्रि रात का बना, दोहन का कुञ्जवना,  
 फूलों का झड़ना, फटियों का बसना हो गिर जाना ।  
 लपटा का बिछा हो जाना, हाथ को जगड़ देना,  
 पुत्रवती का पुत्र-विहीन होकर सब सुख घेना ।  
 स्वर्गों के सौन्दर्य के द्वार होने स्वयं बनाया,  
 उनको निम्नावस्थाओं में सुख-दुःख स्वयं बसाया ।  
 क्षिर दुध का नाशिर देख इन क्यों घबरावें !  
 क्यों ब स्तेय को शत्रु के सनर नोद नवावें !  
 नहीं, दुःख जब निठे दरु करना हो चढ़िर,  
 करने में होकर अटल बनाकुछ हो थड़िर ।  
 जब अयोध्या-घटा घबो क्षिर घबरावेंगे,  
 बन्धुकार ने नागे शनिनी दिखलावेंगे ।  
 जब होगा व्यक्त, दुःख रत वनो निढेगा,  
 तंतेन परवत् नाधुरी-कुसुम छिडेगा ।  
 ओ विरचिते ! विरहवसे अकल्प, स्याते,  
 देखे रने पङ्क दृश्य में मेरे नाथे ।  
 सनर' लो संहर हनारे तुडु दैव का !  
 लो पूर्ण अक्षर हनारे सब वनव का !  
 वन्दे का विद्व-श्रया ने हने उल्लास !  
 पूर रितान्द के विषय ने हने ल्लास ।









( २ )

मृतक समान अशक विवरण बाँधों को मोचे;  
गिरता हुआ बिलोक गर्भ से हम को नीचे;  
करके जितने कृपा हमें अबलम्ब दिया था;  
लेकर अपने अतुल्य बङ्ग में त्राण किया था।  
जो जननी का भी सर्वश,  
धो पालन करती रही।  
तू क्यों न हमारी पूज्य हो,  
मातृभूमि माता मसी ॥

( ३ )

जिसकी रज में लोट लोटकर बड़े हुए;  
घुटनों के बल सरक-सरक कर खड़े हुए हैं।  
परमहंस-सम वाज्यकाल में सब सुख पाये;  
जिसके कारण 'धूठमरे होरे' कहलाये।  
हम खेले कूड़े हर्ष-युत,  
जिसको प्यारी गोद में।  
हे मातृभूमि ! तुझको निरख,  
मग्न क्यों न हों मोद में ?!

( ४ )

पालन पोषण और जन्म का कारण तू ही;  
वक्षःस्थल पर हमें कर रही धारण तू ही।  
लक्ष्मण-प्रासाद और ये मङ्गल हमारे,  
बने हुए हैं बड़े ! तुझी से तुझ पर सारे।



हम मातृभूमि ! देखल तुझे,  
शोश भुका सफते बहो !

( १३ )

कारण वश जब शोकदाह से हम दहते हैं,  
तब तुझ पर ही लोट-लोटकर दुख सहते हैं ।  
पाखंडी भी धूल चढ़ाकर तनु में तेरी,  
फड़लाते हैं साधु, नहीं लगती है देरी ।  
इस तेरी हो शुचि धूलि में,  
मातृ भूमि ! वह शक्ति है ।  
जो क्रूरों के भी चित्त में,  
उपजा सकती भक्ति है ॥

( १४ )

कोई व्यक्ति विशेष नहीं तेरा अपना है,  
जो यह समझे हाथ ! देखता वह सपना है ।  
तुझको सारे जीव एक से हो प्यारे हैं,  
कर्मों के फल-मात्र यहाँ न्यारे न्यारे हैं ।  
हे मातृभूमि ! तेरे निष्कट,  
सब का सम सम्बन्ध है,  
जो भेद मानता वह बहो !  
लोचनयुत भी अन्ध है ।

( १५ )

जिस पृथिवी में मिले हमारे पूर्वज प्यारे,  
उससे है भगवान ! कर्मो हम रहें न न्यारे ।  
लोट लोट कर वहाँ हृदय को शान्त करेंगे,  
उसमें मिलते समय मृत्यु से नहीं डरेंगे ।



ओ उठो शुको शुक्र-बाल सर्व, वे टगे विचारने फिर सगर्व ।  
 आ गये लौटकर नब बिड़ङ्ग, सब गाते गुरु-यश बैठ-सङ्ग ।  
 अय अन्न भूनि-भौख-निधान, अय रूप त्याग के मूर्तिमान ।  
 अय धर्म-परायण महाधीर, प्रपयोर अलौकिक अपति कीर ॥

—गोविन्ददास

—

## प्यारा हिन्दुस्तान

नेरु, द्रोण, दिनगिरि, विन्ध्यावध,  
 गंगा, अनुना, कच्छ, मरुस्थल,  
 सागर, सरिता, खेत समंगल,  
 करते चिद बखान ।

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

बन, उपवन, फल फूल मनोहर,  
 ललित लता लिपटी ठहर पर,  
 सरसिद्ध सडित समोद समेवर,  
 करे सदा सुबदान ।

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

सपि. मुनि. वीर ब्रह्म ब्रह्मवारी,  
 साधु. सती समूह, सुबारी,  
 सिन्धु. सुकवि, गुप्तो. नर-नारी,  
 सब का अन्नस्थान ।

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥



पड़े सड़ रहे हैं मनमारे, खूब फसे हैं बन्धन सारे ।  
नहीं तनिक भी हिलने पाते हैं यह रूपट-कला-जलदलकी ॥

सेवा तेरे चरण-कमल की ॥ १ ॥

फोई हठ-उत्साह रंक है, फोई निज धोहित सशंक है ।  
फोई पड़े प्रपंच-पंक में, छिः मानव-कुल के फलंक है ।  
फोई बिद्रोही मयंक है, क्या फोई ऐसे अशंक है ?  
करें विफट यलिदान शान्ति से लघु लालसा छोड़ प्रतिपलकी ।

सेवा तेरे चरण कमल की ॥ २ ॥

जिनके डर निर्भय निश्चल हैं, मन चच कर्म पक निश्चल हैं ।  
पूर्ण तेजमय जर्जर तन पर केवल यत्फल वसन विमल है ॥  
और परम प्यारे निर्यल हैं, क्या उनके प्रयत्न निष्फल हैं ?  
होती है न्योछावर उन पर, सइसा ऋद्धि-सिद्धि छिति-तल की ।

सेवा तेरे चरण कमल की ॥ ३ ॥

—“एक राष्ट्रीय आत्मा”

## स्वदेश-प्रेम

( १ )

शीत फड़ाके की थी, करता था सी सी सारा संसार ।  
पाटा फटता था हाड़ों में मानों सुइयों की थी मार !  
ककरोछे पधरोछे पथ पर नङ्गे हो पावों था कौन !  
प्राणों की बलि देता किस पर ? सुना परन्तु असो था मौन !  
हृदय-देश उहोलित होकर स्वयं हो उठा शब्द 'स्वदेश' ॥





इस प्रकार कंगाल बाडिका अपनी माँ पत-होना को—  
 दुखदों को सुखतात्र आश्रितक दुखिनो को, इस दोना को—  
 सुन्दर बलानुपम-सज्जित देख चकित हो जातो है।  
 सब है या फेरल सरना है, फड़ता है, रुठ जातो है।

पर सुन्दर लगती है, इच्छा पड़ होती है कर ठे प्यार।  
 प्यारे चरणों पर पडि जाये, कर ठे मनमरके मनुहार ॥  
 इच्छा प्रयत्न हुए, माता के पास दौड़कर जातो है।  
 पलों को संघातो उत्तरो बानुपम पड़नाती है ॥

उसी भाँति आश्चर्य मोद-मय आज मुझे निश्चिन्ता है।  
 मन में उमड़ा हुआ भाव सब सुंदरक आ रुक जाता है ॥  
 प्रेमात्मता होकर तेरे पाँस दौड़ जातो हूँ मैं।  
 तुझे समाने या संशयों में हो मुझ पाती हूँ मैं ॥

तेरी इस महानता में क्या होगा नृप्य समाने का।  
 तेरी मधुर मूर्ति को नरुली आभूषण पड़ाने का ॥  
 किन्तु क्या हुआ माता ! मैं जो तो हूँ तेरी ही सन्तान।  
 इतने ही व्यतोप मुझे है, इतने ही आनन्द महान ॥  
 मुझ को एक-एक को पन तू तोस कोटि की आज हुई।  
 हुई महान सभी, भाषाओं को तूही सिरताऊ हुई ॥  
 मेरे लिए बड़े गौरव की और गव को है यह बात।  
 तेरे द्वारा ही होवेगा भारत में स्वातन्त्र्य-समाप्त ॥  
 अपने प्रथम पर मर मिट जाता यह जीवन तेरा होगा।  
 जगतों के पीरों-द्वारा शुभ पद-उन्दन तेरा होगा ॥



## अन्योक्ति-सुसक्त

मैना तू बन-बासनी, परी पीढ़े जान,  
 ज्ञान वैव-गति-छादि में रहे शांत सुख मान ।  
 रहे शान्त सुख मान बाग कोमल ते अपनी,  
 सय पक्षि-सरदार तोहि फ वि-फोविद बनो ।  
 कहें 'मीर' करि नित्य, दोलती मधुरे पैना ।  
 तौ मी तुन्हासो धन्य, यनी तू अद्भुत मैना ॥१०  
 तोता तू पऊड़ा गया, जय या निपट नदान,  
 बड़ा हुआ कुछ पड़ डिया तौ मी रहा अज्ञान ।  
 तौ मी रहा अज्ञान ज्ञान का मर्म न पाया ।  
 जीवन पर डे क्षय सौंय निद्र घर बिसराया ।  
 कहें 'मीर' समुन्हाय क्षय ! तू ब्रह्म सौं सोता ।  
 चेता जो नहि जाय, किया क्या पड़ के तोता ॥११  
 बिलो निद्र पति-पातिनी तुन्हासो प्यारा नेह,  
 छातो है प्रियका मनक, उससे नेह न नेह ।  
 उससे नेह न नेह देह पर पानी हमला,  
 सा पाकर घां दूय कमाई घर का कमला ।  
 कहें 'मीर' समुन्हाय, पड़े तू चहे दिना ।  
 नमक-रानी काय न रहे तुन्हासो बिलो ॥  
 बगला बंडा खान ॥ १२ ॥ ३६ ॥ ३६ ॥  
 माला ॥ ३६ ॥ ३६ ॥ ३६ ॥ ३६ ॥  
 मलकर नमन शीर मन ॥ ३६ ॥ ३६ ॥  
 कहें 'मीर' प्रति पौच समूच सीरन निगडा



## जन्योक्ति-सप्तक

मैना तू वन-वास्तवी, परी पोंडरे जान,  
 जान दैव-गति-ठाहि में रहे शांत सुख मान ।  
 रहे शान्त सुख मान यान खोनठ ते अपनी,  
 सख पक्षित-सरदार तोहि क बि-कोविद बनो ।  
 कहैं 'मोरे' करि नित्य, सेटतो नधुरे बैना ।  
 तौ मो तुम्हलो धन्य, यणी तू बज्जह मैना ॥१॥  
 ठोठा तू पच्छा गया; जर या निपट नदान,  
 बड़ा हुना कुछ पड़ जिया तौ मो खा बदान ।  
 तौ मो खा बदान शान का नर्म न पाया ।  
 जंघन पर छे हाथ लौर निद्र घर सिखाया ।  
 कहैं 'मोरे' समुझाय शाय ! तू जर लौं छोटा ।  
 खेता छे नहिं जाय, सिपा परा पड़ छे ठोठा ॥२॥  
 बिहो निद्र पति-वालिनी तुम्हरो प्यास नेह,  
 खातो है जिहका नमक, उलछे नेह न नेह ।  
 उलछे नेह न नेह देह पर पटो हनटा,  
 या जाकर धो दूध बनारि घर लौं बनटा ।  
 कहैं 'मोरे' समुझाय, पड़े तू यहै सिखी ।  
 नमस्कारानो बाट न दूटे तुम्हछे सिखी ॥३॥  
 बगला रैठा ध्यान में प्राक उठ छे ठोर,  
 नाने नरकी उप हरे नरका नमन छोर ।  
 नलहर नमन शेर नर उप देखी नलछे  
 कहैं 'मोरे' प्रति खेय समूहो सौरन निगड









जिनकी मृदु मुसकानि सरलता विरहित गालों की लाली ।  
 देख देख सुन्दर फूलों की रचता है जग का माली ॥  
 बघी हुई मिट्टी की जिनने बच तक नहीं पसारा है ।  
 जिनकी हाथों से पैरों का बघिड़ जंगूठा प्यारा है ॥  
 भावी भारत-गौरव-गढ़ की सुदृढ़ नाँव के जो पत्थर ।  
 आर्यदेश की दटल इमारत का बनना जिन पर तिनर ॥  
 उन्हीं अनूठे फानों की यह मेरी स्वरमय वादन-पुकार ।  
 पहुँचे आरलता की जड़ में जिसमें होय शक्ति-संचार ॥

—नाथव शुक्ल

### उन्माद

( १ )

अब नहीं जाकर किया तुमने हृदय में वास ,  
 हो लघोर स्वयं चला अब यह तुम्हारे पास ।  
 पर न तुम्हकी पा लक्ष्मी की यद्वि बहुत बलाह,  
 लौट जाया जन्त में होकर जगोय हठाथ ॥

( २ )

दृष्टिगोचर हो न तुम फलत सभी नतिमान ,  
 सत्य हम नी क्यों न फिर यह बात डेते मान ।  
 लखना की मूर्खता करने लगे हम व्यग्र ,  
 हाय, तो भी कुछ हमें न हुआ तुम्हारा नर ॥

( ३ )

चित्त देकर और तुम को एक दिन का कट  
 सो रहे थे हम पडे कीटी बाट का टट



## विविध विषय ]

जिनकी मृदु मुसकानि सरलता विरहित गालों की छा  
 देख देख सुन्दर फूटों को खचा है जग का माल  
 बधो हुई मिटों को जिनने अब तक नहीं पसारा है  
 जिनको हाथों से पैरों का अधिक अंगूठा प्यारा है  
 भावों भाव-गौरव-गढ़ की सुदृढ़ नींव के जो पथर  
 आर्पदेश की टटल श्मशान का बनना जिन पर निराल  
 ऊँची अनूठे खानों की पर नेरी स्वरमय जातन-पुकार  
 पहुँचे आसलता चाँ जड़ में जितने होय शक्ति-संचार ॥

—नामक मुकद

### उन्माद

( १ )

जब नहीं जाकर दिया तुमने हृदय में बाँध ,  
 हो अधोर स्वयं चला तब वह तुम्हारे शर ।  
 पर न तुम्हें पता चला कि पदवि बहुत बड़ा है,  
 लोट जाया जन्म में होकर जहाँ बड़ा है ॥

( २ )

होमिगोवर हो न तुम खड़े बनो न विमान ,  
 सत्य इन नो क्यों न छि पड़ बात लेवे मान !  
 टाँवना की मृदुल धरने लगे इन ब्रान ,  
 हय, ना ना कुछ इनने न हुआ तुम्हारा जान ॥

( ३ )

चित्त दूर और सुर लें एक दिन की बात ,  
 ल रहे थे इन पडे बोली बहुत ॥







बलिबाला से मुन तब सहता—'जग है देवत सदा-सदा'  
अपित कर देती मातृ को वह अपने सौजन्य का नर !

( ६ )

हिम-जल वन तारफ-पलकों से. उनह मोझियों से व्यदत,  
सुमनों के वधखुले दृगों में स्वप्न लुप्तते हैं जो दूर,  
उन्हें सहज जल में चुन-चुन गूँथ उपा दिरों में दूर,  
क्या अपने उर के पित्तप का तूने कनी किया गहर !

( १० )

विजय-जोड़ में चौक बचानक, विटप-बालिका पुट्टि-बाल,  
जिन सुवर्ग-स्वप्नों को गाथा गा गाकर छुड़ा है दूर,  
सज्जति ! कनी क्या सोचा तूने तबजों के तन में सुवर्ण,  
दोष-शयन दोषों को चमका करते हैं जो नैन-जाल !  
—मुनिपुत्र-पुत्र

जांतू !

हे मेरी बाँझों के जांतू ! हे इस जीवन के इतिहास !  
उलक पड़ी मत, रही अन्त तक, उनहें इस दुखिनाहें रज,  
हे करुणा के चिड़ ! बड़ी अनिडापा को नोख नर,  
मत छुटका है दंगी हुई तुम पर ही मेरे मुन दूर,  
हृदय-वेदना के परिचायक ! निराधार है हे जाघार !  
अन्तस्तक को धोनेवाले ! हे मेरे सुमुल उद्धार,  
हे मेरी अतल्य भूलों के—मूर्तिमान सच्चे व्यक्त,  
शोषित करते रही सदा इस दुःख हृदय का नोदर !



ANDY DICK ELEPH—

[illegible]







